दूसरा हिस्सा
आईए
नहजुल
बलाग़ा
से सीखते हैं
दुआ
हुज्जतुल इस्लाम
जवाद मोहद्दिसी
अनुवादक: अब्बास असग़र शबरेज़

दूसरा हिस्सा

आईए

नहजुल बलाग़ा

से सीखते हैं

(दुआ)

हुज्जतुल इस्लाम

जवाद मोहद्दिसी

अनुवादकः अब्बास असग़र शबरेज़

किताब	:	आईए! नहजुल बलाग़ा से सीखते हैं (2)
राईटर	:	हुज्जतुल इस्लाम जवाद मोहद्दिसी
अनुवादक	:	अब्बास असग़र शबरेज़
पहला प्रिन्ट	:	नवम्बर 2015
तादाद	:	2000
पब्लिशर	:	ताहा फ़ाउंडेशन, लखनऊ
		8090775577, 9956620017
प्रेस	:	पंचशील प्रेस, लखनऊ
क़ीमत	:	25/=

Contents
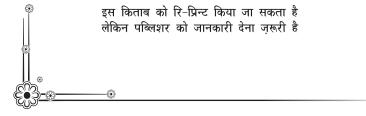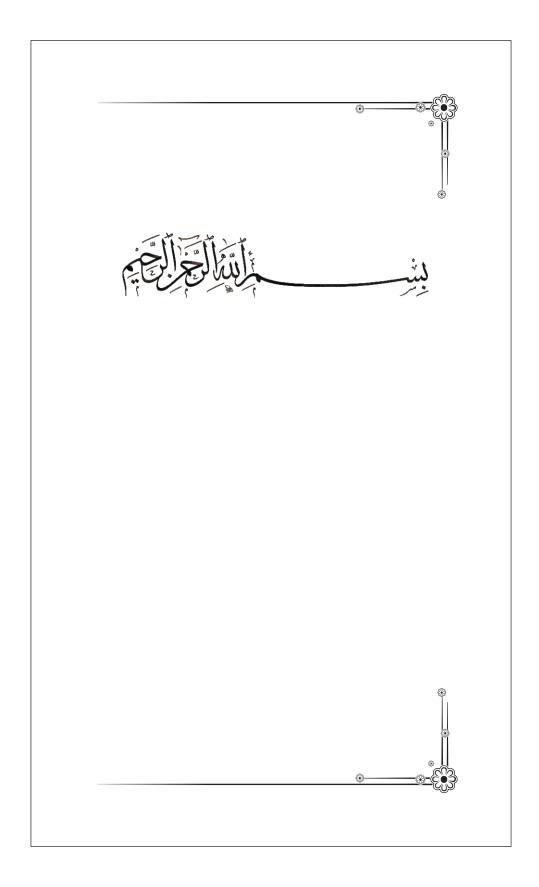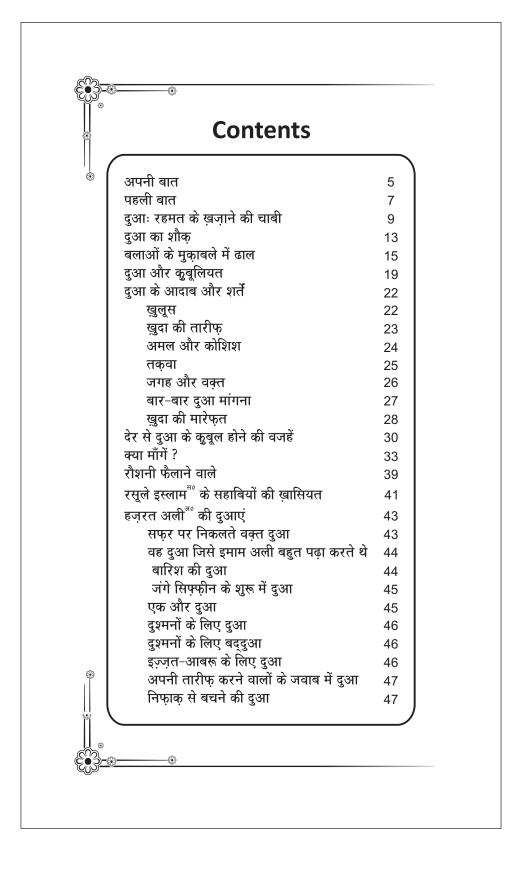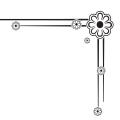
अपनी बात

आज की दुनिया भीड़-भाड़, शोर-ग़ुल, हुल्लड़ हंगामे और चकाचौंध की दुनिया है जिसमें इन्सान और इन्सानियत के ख़िलाफ़ हर वक़्त शैतानी चालें और शैतानी साज़िशें खेली जा रही हैं जिसकी वजह से हम जैसे इन्सान तरह-तरह की ज़ेहनी व रूहानी बीमारियों और मुश्किलों में घिरे हुए हैं बल्कि मुश्किलों के एक दलदल में फंसे हुए हैं जिस से निकलने का रास्ता भी नज़र नहीं आता। इसकी सबसे बड़ी वजह यह है कि जिन दुनियावी चीज़ों और फ़ैक्टर्स की वजह से हम इन मुश्किलों में फंसे हुए हैं, उन मुश्किलों से निकलने के लिए भी हम उन्हीं लोगों की तरफ़ देखते हैं जिन्होंने हमारे चारों तरफ़ इन मुश्किलों का जाल बुना है। नतीजा यह होता है कि हम मुश्किलों में और फंसते जाते हैं। जबकि ज़िन्दगी की मुश्किलों से बाहर निकलने और एक सही ज़िन्दगी बिताने के लिए ख़ुदा ने अपनी किताब यानी क़ुरआन और मासूम इमामों की शक्ल में इल्म के ख़ज़ाने हमारे पास भेजे हैं। इमामों व अहलेबैत[अ०] की ज़िंदगी और उनका बताया हुआ रास्ता हमारे लिए सबसे अच्छा रास्ता था और उनमें भी हज़रत अली[अ०] ने जो कुछ कहा या लिखा, उस को मिलाकर लिखी गई किताब नहजुल बलाग़ा सबसे अलग है जो हर ज़माने में हमें सही रास्ता दिखाने के लिए सबसे रौशन चिराग़ है।

नहजुल बलाग़ा एक ऐसी किताब है जिसमें हज़रत

अली[अ०] ने ज़िन्दगी के हर मसले और हर मुश्किल के बारे में बात की है और उस मुश्किल से निकलने के लिए हमें रास्ता दिखाया है।

जो किताब आपके हाथों में है उसमें कोशिश की गई है कि दुनिया भर में मशहूर किताब 'नहजुल बलाग़ा' में लिखी बातों को बिलकुल आसान ज़बान में अपने उन नौजवानों के सामने पेश किया जाए जो हज़रत अली[अ०] के कलाम को पढ़ना और समझना चाहते हैं ताकि हम अपने पालने वाले से ज़्यादा से ज़्यादा क़रीब हो सकें।

यह किताब ''आईए! नहजुल बलाग़ा से सीखते हैं–2'' ईरान के एक मशहूर राइटर और स्कॉलर हुज्जतुल इस्लाम जवाद मोहद्दिसी ने लिखी है और आपके सामने यह उसका हिन्दी ट्रांस्लेशन है। इस सीरीज़ की पहली कड़ी ''तौबा'' के बारे में थी जो छप चुकी है और अब यह दूसरा हिस्सा ''दुआ'' के सिलसिले में है।

इस सीरीज़ के अभी और भी हिस्से बाक़ी हैं। ख़ुदा ने तौफ़ीक़ दी तो वह भी जल्दी ही आपके सामने पेश किए जाएंगे।

किताब छपती है तो उसमें कहीं न कहीं कमियां या ग़ल्तियां रह ही जाती हैं। यह किताब आपके हाथों में है। इसे पढ़ने के बाद जो कमियां आपको नज़र आएं वह हमें ज़रूर बताईए ताकि अगले एडिशन में उन्हें दूर किया जा सके।

ताहा फ़ाउंडेशन
लखनऊ
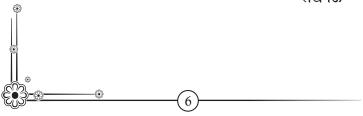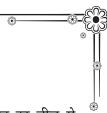
पहली बात

''दुआ'' ख़ुदा से मोहब्बत की निशानी है। यह हर चीज़ से बेनियाज़ ख़ुदा की बारगाह में एक मोहताज बन्दे का राज़ो नियाज़ भी है। दुआ अपने मालिक की बारगाह में एक ऐसी इबादत है जिसका सोर्स इन्सान की वह फ़ितरत है जो ख़ुदा के आस्ताने पर सजदा करती है यानी यह सिफ़त इन्सान के अन्दर पैदाइशी तौर पर पाई जाती है।

इन्सान अपने पालने वाले के सामने कुछ भी नहीं है जबकि ख़ुदा की न कोई हद है और न सरहद। इंसान ख़ुदा के मुक़ाबले में बिल्कुल ऐसे ही है जैसे समन्दर के मुक़ाबले में एक क़तरा बल्कि क़तरा भी नहीं है। जो चीज़ इस हक़ीर व मामूली क़तरे को ख़ुदा की इस बेनिहायत ज़ात से जोड़ती है उसी का नाम ''दुआ'' है।

दुआ सिर्फ़ अलफ़ाज़ को दोहराने का नाम नहीं है बल्कि दुआ अपने तमाम वुजूद के साथ अपने सारे एहसास और जज़्बात को इकट्ठा करके दिल की गहराईयों से अपनी हाजत को ख़ुदा से माँगने का नाम है।

दुआ अगर ग़मज़दा हालत और टूटे हुए दिल के साथ दिल की गहराई से निकलती है तो सीधी जाकर अर्श से टकराती है।

जब दिल के आसमान पर बादल छा जाएं तो सिर्फ़ राज़ो नियाज़ और आंसुओं की बारिश ही है जिस से दिल के चमन को सैराब किया जा सकता है। यह आंसुओं का सैलाब रहमत की एक ऐसी बारिश है जो बन्दे को अपने मालिक और पालने वाले से मिला देती है।

ख़ुदा के भेजे हुए नबियों और मासूम इमामों[अ०] ने हमेशा ख़ुदा के सामने दुआ के लिए अपने हाथ फैलाए हैं और उनकी उम्मीदें हमेशा ख़ुदा की रहमत ही से लगी रही हैं। नबी दाऊद[अ०] की दुआओं से लेकर रसूले इस्लाम[स०] की मुनाजात तक, हज़रत अली[अ०] के आंसुओं से लेकर इमाम हुसैन[अ०] के राज़ो

नियाज़ तक, सहीफ़-ए-सज्जादिया में इमाम ज़ैनुलआबिदीन[अ०] की रूहानी दुआओं से लेकर दूसरे तमाम दीनी रहनुमाओं के दुआ भरे अलफ़ाज़... आंसुओं का यह सिलसिला हमेशा से चला आ रहा है।

क़ुरआन मजीद में बहुत से बन्दों की ज़बानी दुआएं लिखी हुई हैं। इन दुआओं और मासूमीन की दूसरी दुआओं में दीनी टीचिंग्स का एक बहुत बड़ा ख़ज़ाना मौजूद है।

ख़ुदा ने क़ुरआन मजीद में दुआओं और मुनाजात के सिलसिले में बहुत ज़्यादा ज़ोर दिया है और अपने दुआ करने वाले बन्दे से दुआ की क़ुबूलियत का वादा भी किया है।

हमें हर वक़्त और हर ज़माने में दुआ व मुनाजात की ज़रूरत है। हम कहीं भी हों और किसी भी हालत में हों, मस्जिद में हों या स्कूल में, घर में हों या किसी सोशल प्रोग्राम में... हमें चाहिए कि हम अपने माबूद की बारगाह में अपनी बन्दगी का इज़हार करें ताकि हमारा मेहरबान ख़ुदा हमें अपने करम की निगाहों से देखे और हमारी दुआओं को क़ुबूल कर ले।

जो किताब आपके सामने है यह उन उसूलों पर लिखी गई है जो उसूल दुआ के बारे में हज़रत अली[अ०] ने नहजुल बलाग़ा में हमें बताए हैं।

हज़रत अली[अ०] ख़ुद भी एक बेमिसाल आबिद, मुत्तक़ी, रातों को मुनाजात करने वाले, ख़ुदा के आशिक़ और एक सच्चे आरिफ़ थे जिन्होंने अपनी सारी उम्र अपने माबूद के आस्ताने पर सर रखकर गुज़ार दी थी।

यह दुआएं वह दुआएं हैं जिनमें बहुत गहरी, ख़ूबसूरत व अनोखी बातों और इस्लामी टीचिंग्स का एक समंदर छुपा हुआ है। यह दुआएं हमारे पास हज़रत अली[अ०] की एक बहुत क़ीमती निशानी व यादगार हैं।

उम्मीद है कि अल्लाह तआला ''दुआ'' और ''दुआ की क़ुबूलियत'' का दरवाज़ा हमारे ऊपर भी खोल देगा।

जवाद मोहद्दिसी
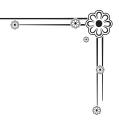
दुआः रहमत के ख़ज़ाने की चाबी

गुनाहगार इन्सान, माफ़ी और बख़्शिश का मोहताज होता है।

धुतकारा हुआ और ख़ुदा की बारगाह से निकाला हुआ इंसान मोहब्बत भरी निगाहों को तलाशता रहता है जिसमें वह समा जाए और जो शख़्स ख़ुद को एक करीम व मेहरबान ख़ुदा की बारगाह में पाता है तो उसकी ख़्वाहिश होती है कि उस से गुज़ारिश करे ताकि उस करीम के करम और बख़्शिश की बारिश में सुकून की सांस ले सके।

दुआ ऐसी ही मोहब्बत व मेहरबानी भरी आग़ोश और ऐसी ही रहमत है जिसका दरवाज़ा हमारे लिए हर वक़्त खुला हुआ है। ख़ुदा ने हमें ख़ुद से बात करने, मुनाजात करने और राज़ो नियाज़ करने की इजाज़त दी है, वह हमारी बातों को सुनता है और हमारी दुआओं को क़ुबूल करता है... यह उसका हम पर ऐसा करम है जो कभी ख़त्म नहीं होने वाला। हमें इस मौक़े को ग़नीमत समझना चाहिए और जब तक दुआ का दरवाज़ा हम पर खुला हुआ है, अपने ख़ालिक़ और अपने मालिक से दुआ व मुनाजात करते रहना चाहिए।

हज़रत अली[अ०] कहते हैंः

> अच्छे आमाल बजा लाओ, अभी जबकि आमाल बुलन्द हो रहे हैं तो यह फ़ायदा दे सकते हैं। पुकार सुनी जा रही है। हालात पुरसुकून हैं और फ़रिश्ते क़लम चला रहे हैं। बुढ़ापे की तरफ़

> पलटाने वाली उम्र, पैरों की ज़ंजीर बन जाने वाली बीमारियां और झपट लेने वाली मौत से पहले आमाल की तरफ़ जल्दी करो।[1]

इसका मतलब हमारे पास अमल और तौबा करने का मौक़ा हमेशा नहीं है। उधर दुआ भी हमेशा ख़ुदा की बारगाह में क़ुबूल नहीं होती। फिर मरने के बाद अमल और दुआ की गुन्जाइश भी ख़त्म हो जाती है जिसके बाद ख़ुदा इन्सान की किसी भी ख़्वाहिश और दुआ की तरफ़ ख़ुदा ध्यान नहीं देता।

एक दूसरी जगह इमाम अली[अ०] कहते हैं:

> उसने तुम्हें अपनी बारगाह में सवाल करने का तरीक़ा बताकर तुम्हारे हाथ में अपने ख़ज़ानों को खोलने वाली कुंज़ियाँ दे दी हैं। इस तरह जब तुम चाहो दुआ के ज़रिए उसकी नेमत के दरवाज़ों को खुलवा सकते हो, उसकी रहमत के झालों को बरसा सकते हो। अगर कभी क़ुबूल होने में देर हो तो उस से नाउम्मीद न हो जाना।[2]

जैसा कि हम जानते हैं कि ख़ुदा की तरफ़ से बन्दों के ऊपर उसका एक बहुत बड़ा करम यह है कि उसने उनको अपनी बारगाह में आने और मुनाजात करने की इजाज़त दी है।[3] इस से भी बढ़कर यह कि ख़ुद ख़ुदा ने अपने बन्दों से कहा है कि मुझ से दुआ माँगो, मैं क़ुबूल करूँगा:

> मुझ से मांगों, मैं तुम्हारी दुआ क़ुबूल करूंगा।[4]

अगर रहमत व मग़फ़िरत की बारिश बन्दों पर होती है तो यह सब ख़ुदा की बारगाह में दुआ व मुनाजात और राज़ो नियाज़ का नतीजा है। हमारी बन्दगी हम से कहती है कि हम उसकी बारगाह में रोएं, गिड़गिड़ाएं और उस से राज़ो नियाज़ करें और दिल की गहराईयों से अपनी हाजतों व ज़रूरतों के लिए दुआ करें। उधर उसके ''पालने वाला'' होने का नतीजा यह है कि वह हम पर अपने करम की बारिश करे और अपने

रहीम होने का सुबूत दे।

इस तरह हम कह सकते हैं कि दुआ बन्दे और ख़ुदा के बीच में एक बेहतरीन रिश्ता बनाती है। यह दुआ एक ख़ज़ाने की चाबी की तरह है कि जिस किसी मोहताज बन्दे के हाथ यह चाबी लग गई वह ख़ुदा की कभी न ख़त्म होने वाली रहमत और करम से जुड़ जाता है।

यहाँ तक कि सूखे से बचने और बारिश होने के लिए भी हमें नमाज़े इस्तेस्क़ा पढ़ने का हुक्म दिया गया है। हमारी हिस्ट्री ऐसे वाक़िआत से भरी पड़ी है जब उसके बन्दों ने रो-रो कर और गिड़गिड़ा-गिड़गिड़ा कर उसकी बारगाह में बारिश की दुआ की है और ख़ुदा ने उनकी दुआ को क़ुबूल करते हुए बारिश भेज दी है।

अगर कामयाबी व ख़ुशक़िस्मती, नेक औलाद, रिज़्क़ व रोज़ी-रोटी, सेहत व तन्दुरुस्ती, सलामती, ख़ैरो बरकत, गुनाहों से दूरी वग़ैरा क़ीमती ख़ज़ानों में गिने जाते हैं तो इन सब चीज़ों की चाबी दुआ ही तो है। जो ख़ुदा की बारगाह में गिड़गिड़ा कर दुआ के लिए अपने हाथ बुलन्द करता है उस पर इन ख़ज़ानों के दरवाज़े अपने आप खुल जाते हैं।

इमाम अली[अ०] ने जगह-जगह इस हक़ीक़त की तरफ़ इशारा किया है। जैसे वह ख़त जो इमाम ने अपने बेटे इमाम हसन[अ०] को लिखा है, उस ख़त में इमाम लिखते हैं:

> यक़ीन रखो कि जिसकी क़ुदरत में आसमान व ज़मीन के ख़ज़ाने हैं उसने तुम्हें सवाल करने की इजाज़त दे रखी है और क़ुबूल करने का ज़िम्मा लिया है और हुक्म दिया है कि तुम माँगो ताकि वह तुम्हें दे सके, रहम की दरख़्वास्त करो ताकि वह रहम करे। उसने अपने और तुम्हारे बीच चौकीदार नहीं खड़े किए जो तुम्हें रोकते हों, न तुम्हें इस पर मजबूर किया है कि तुम किसी को उसके यहाँ सिफ़ारिश के लिए लाओ तब ही काम हो और तुम ने गुनाह किए हों तो उसने तुम्हारे
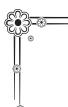
लिए तौबा की गुन्जाइश ख़त्म नहीं की है, न सज़ा देने में जल्दी की है और न तौबा के बाद वह कभी ताने देता है (कि तुम ने पहले यह किया था, वह किया था), न ऐसे मौक़ों पर उसने तुम्हें ज़लील किया कि जहाँ तुम्हें ज़लील ही होना चाहिए था। न उसने तौबा के क़ुबूल करने में तुम्हारे साथ सख़्ती की है, न वह गुनाह के बारे में तुम से सख़्ती के साथ बहस करता है और न अपनी रहमत से मायूस करता है। बल्कि उसने गुनाह से बचने को भी एक नेकी कहा है और बुराई एक हो तो उसे एक (बुराई) और अगर नेकी एक हो तो उसे दस (नेकियों) के बराबर ठहराया है। उसने तौबा का दरवाज़ा खोल रखा है कि जब भी उसे पुकारो वह तुम्हारी सुनता है, और जब भी राज़ो नियाज़ करते हुए उस से कुछ कहो वह जान लेता है। तुम उसी से मुरादें माँगते हो और उसी के सामने दिल के भेद खोलते हो। उसी से अपने दुख-दर्द का रोना रोते हो और मुसीबतों से निकालने की इल्तेजा करते हो और अपने कामों में मदद माँगते हो।[5]

क्या यह सारी बातें इस बात का सुबूत नहीं हैं कि दुआ ख़ुदा के ख़ज़ाने की चाबी है ?

ख़ुदा ने हम को दुआ करने का तरीक़ा व सलीक़ा भी सिखाया है। यह उसकी रहमत का दूसरा खुला सुबूत है।

1- नहजुल बलाग़ा, ख़ुतबा/227
2- नहजुल बलाग़ा, ख़त/31
3- दुआए इफ़्तेताह में हैः ऐ ख़ुदा! तूने हमें इजाज़त दी है कि हम तुझको पुकारें और तुझ से सवाल करें।
4- सूरए मोमिन/60
5- नहजुल बलाग़ा, ख़त/31

दुआ का शौक़
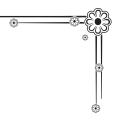
जब दुआ बन्दे और ख़ुदा के बीच एक मोहब्बत भरा रिश्ता, मेहबूब से बातचीत, राज़ो नियाज़ करने का बेहतरीन लम्हा और मेहरबान ख़ुदा के सामने अपने दिल की आरज़ुओं को सजा कर अपने दिली हालात को बयान करने का बेहतरीन ज़रिया है तो हमें पूरे शौक़ के साथ और ख़ुशी-ख़ुशी दुआ करना चाहिए। ख़ुदा की बारगाह में दुआ करने वाले को कभी भी मायूस नहीं होना चाहिए और न ही किसी तरह की सुस्ती या थकावट का एहसास करना चाहिए क्योंकि दुआ करने का एक बहुत बड़ा फ़ाएदा यह भी है कि दुआ करने वाले को तन्हाई से निजात मिल जाती है और ख़ुदा से बात करने का मौक़ा मिल जाता है।

हज़रत अली[अ०] इस बारे में फ़रमाते हैं:

> जब भी उसे पुकारो तो वह तुम्हारी बात सुनता है और जब भी राज़ो नियाज़ करते हुए उस से कुछ कहो तो वह जान लेता है।[1]

''निदा'' बुलंद आवाज़ से पुकारने को और ''नजवा'' या मुनाजात आहिस्ता से पुकारने को कहते हैं। ख़ुदा के लिए दूर से या पास से पुकारने में कोई भी फ़र्क़ नहीं है, दोनों बराबर हैं। वह जैसे दूर की आवाज़ को सुनता है वैसे ही पास की आवाज़ को भी सुनता है। वह निदा को भी सुनता है और नजवा को भी। उसे अपने बन्दे की मुनाजात व दुआ बहुत पसन्द है।

ख़ुदा चाहता है कि उसको ख़ुशियों के मौक़ों पर भी उसी तरह याद रखा जाए जिस तरह मुसीबतों और परेशानियों में याद किया जाता है। यह हमारी नासमझी की वजह से होता है कि हम उसे सिर्फ़ मुसीबतों के वक़्त में पुकारते हैं और फ़ौरन ही अपनी दुआ के क़ुबूल होने की ख़्वाहिश भी रखते

हैं। जबकि हमारी दुआओं पर हमेशा उसके कान लगे हुए हैं। यह हम हैं जो कभी उस से राज़ो नियाज़ करते हैं और दुआ मांगते हैं और कभी उसे बिल्कुल भूल जाते हैं। शैतान भी अपनी सारी कोशिश इस बात पर लगाए रहता है कि हमारे और ख़ुदा के बीच के रिश्ते की डोर यानी दुआ को काट दे।

दुआ व मुनाजात का मतलब ख़ुदा से बातें करना है। इस रिश्ते को हर वक़्त, हर जगह और हर हाल में बाक़ी रहना चाहिए। ख़ुदा से हमारा रिश्ता एक दिन बनने वाला और दूसरे दिन टूट जाने वाला नहीं होना चाहिए। यह मुश्किल अगर है तो हमारी तरफ़ से है, वरना ख़ुदा दुआ की रूहानी दुनिया में हर लम्हा बन्दों की तरफ़ से उनकी दुआओं व राज़ो नियाज़ के पैग़ाम को सुनने के लिए तैयार रहता है।

कोई भी हो, कहीं का भी हो, कोई भी ज़बान बोलने वाला हो, बिना किसी रुकावट के या बिना किसी लाइन में खड़े हुए या इन्तेज़ार किए अपने इस पालने वाले ख़ुदा से जुड़ सकता है।

हमारे पालने वाले से हमारे इस रिश्ते की यही सब से ख़ास बात है।

हज़रत अली[अ०] इस रिश्ते की तारीफ़ करते हुए कहते हैंः

> उसने अपने और तुम्हारे बीच चौकीदार नहीं रखे जो तुम्हें रोकते हों। न तुम्हें इस पर मजबूर किया है कि तुम किसी को उसके यहाँ सिफ़ारिश के लिए लाओ तब ही काम हो।[2]

यानी बिना किसी सिफ़ारिश के और पहले से वक़्त लिये बग़ैर तुम अपने पालने वाले से बात कर सकते हो। उसके सामने अपने कुछ भी न होने को क़ुबूल करो, उसकी तारीफ़ करो, उसकी हम्द करो, अपने गुनाहों की बख़्शिश चाहो, उसकी इबादत व बन्दगी करो और यह भी दुआ करो कि उसके और तुम्हारे बीच दुआ व मुनाजात का यह रिश्ता हमेशा यूं ही बाक़ी रहे।

यह वह सिफ़त है जिससे दुआ का शौक़ भी बढ़ता है और बन्दे को ख़ुदा से मुनाजात का तरीक़ा भी आ जाता है।

ख़ुदा बे हिसाब देता है और वह सब को देता है चाहे मांगने वाला काफ़िर हो या मुश्रिक, मोमिन हो या तौहीद को मानने वाला। उन्हें भी देता है जो उसकी बारगाह में दुआ के लिए हाथ उठाते हैं और उन्हें भी देता है जो अपनी जिहालत या नासमझी और ग़ुरूर या तकब्बुर की वजह से ख़ुदा से कोई सरोकार नहीं रखते, लेकिन ख़ुदा का करम सब पर होता है।[3]

दुआ सिर्फ़ गुनाहगारों के लिए नहीं है, बल्कि अच्छे और नेक लोगों को भी उसकी बारगाह में दुआ के लिए अपने हाथ बुलन्द करना चाहिएं। इसी तरह दुआ नेक, पाक और ख़ुदा के नज़दीक आबरू रखने वाले लोगों के लिए ही नहीं है, बल्कि गुनाहगारों और अपनी दुनिया में मस्त लोगों को भी उससे दुआ मांगने का हक़ है। वह भी अपने ख़ालिक़ और मालिक से बात कर सकते हैं, उससे दुआ व मुनाजात कर सकते हैं, अपनी मग़फ़िरत व बख़्शिश और तौबा के क़ुबूल होने की उम्मीद रख सकते हैं क्योंकि ख़ुदा तो सबका ख़ुदा है, यानी गुनाहगारों का भी ख़ुदा है और नेक बन्दों का भी।

मुसीबतों के मुक़ाबले में ढाल

दुआ हमेशा इसलिए नहीं होती कि ख़ुदा की रहमत व नेमत हमें मिलती रहे बल्कि कई बार दुआ अज़ाब व बलाओं से बचने के लिए भी होती है।

जिस तरह बांध कभी इसलिए बनाया जाता है कि उससे इन्सानों और खेतों के लिए पानी इकट्ठा कर लिया जाए और कभी सैलाब की तबाही से बचने के लिए बनाया जाता है। उसी तरह दुआ भी कभी ख़ुदा की नेमतों और रहमतों को अपनी तरफ़ मोड़ने के लिए होती है, चाहे दुनिया में हो, या आख़िरत में, और कभी बलाओं और मुसीबतों को दूर करने या अज़ाब, बीमारी, परेशानियों, ज़िल्लत व रुस्वाई और पछतावे या शर्मिन्दगी से बचने के लिए होती है।

दुआ के 'सीलबन्द' होने के बारे में हज़रत अली[अ०] कहते हैंः

दुआ से मुसीबतों की लहरों को दूर करो।[4]

इन्सान की ज़िन्दगी की नांव हमेशा मुसीबतों और रंजो ग़म के थपेड़ों पर होती है। इनमें से कुछ मुसीबतें ख़ुद इन्सान के करतूतों की वजह से आती हैं, यहाँ तक कि अचानक होने वाली मौतें, रिज़्क़ की कमी, पैसे या आमदनी की मुश्किलें, जवानी की मौत... वग़ैरा यह सब ज़्यादातर इन्सानों के बुरे कामों और बुराईयों का नतीजा होती हैं। ऐसे में दुआ कुछ गिरहें खोल सकती है और मुसीबतों को दूर कर सकती है।

हज़रत अली[अ०] ने अपने सहाबी कुमैल को दुआए कुमैल सिखाई थी जिसमें हज़रत अली[अ०] ख़ुदा की बारगाह में कहते हैं:

> न जाने कितनी कमर तोड़ देने वाली बलाओं को तूने हम से दूर किया है।

कौन दुआ करे ? परेशान हाल इंसान या बेफ़िक्र व ऐशो आराम वाला ? फ़क़ीर या अमीर ? सेहतमंद या बीमार ?

ऐसा नहीं है कि दुआ व मुनाजात सिर्फ़ परेशान हाल, मुसीबतों में घिरे इंसानों, दर्दमन्दों और फ़क़ीरों के करने की चीज़ है क्योंकि हर इन्सान हर हालत में बलाओं और मुसीबतों के थपेड़ों पर है और इस बात की कोई गारंटी नहीं है कि वह हमेशा एक आरामदेह और नेमतों से मालामाल ज़िन्दगी बसर करेगा और ग़ुरबत या परेशानियां कभी उसके हिस्से में नहीं आएंगी। इस लिए हर इंसान को दुआ करना चाहिए, चाहे वह ख़ुशियों भरी ज़िंदगी बिता रहा हो या मुसीबतों भरी।

हज़रत अली[अ०] फ़रमाते हैं:

> सख़्ती व मुसीबतों में घिरे आदमी को जितनी दुआ की ज़रूरत है, उस से कम दुआ का मोहताज वह भी नहीं है जो आराम व सूकून से है क्योंकि न जाने कब मुसीबत आ जाए।[5]
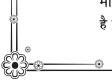
यानी ऐसा नहीं है कि सिर्फ़ मुसीबतों व बलाओं में फंसे लोगों को ही दुआ की ज़रूरत है बल्कि आराम भरी ज़िंदगी बसर करने वाले भी दुआ के मोहताज होते हैं क्योंकि वह बिल्कुल बलाओं के हमले से बचे हुए नहीं हैं। उनकी सेहत व सलामती, अमीरी व आसानी हमेशा ख़तरे में है। रसूले इस्लाम के ज़माने में भी कुफ़्फ़ार हमेशा अपने मालो दौलत के ग़ुरूर में चूर रहा करते थे और सोचते थे कि हमेशा ऐसे ही हालात रहेंगे मगर क़ुरआन हमेशा उनको टोकता रहता था कि हो सकता है कि यह नेमतें तुम से छीन ली जाएं, फिर यह नेमतें तुम्हें कौन देगा ?

आफ़तों, बलाओं, परेशानियों, अचानक होने वाले हादसों, ज़लज़लों व सैलाब और ख़ुदा के अज़ाब से ख़ुद को महफ़ूज़ समझना आदमी की ग़लत फ़हमी व नासमझी की निशानी है। ख़ुदा की बारगाह में गिड़गिड़ा कर आफ़तों और मुसीबतों से बचे रहने की दुआ करना उन लोगों का काम है जो आफ़तों व मुसीबतों को भी पहचानते हैं और यह भी जानते हैं कि दुआ ही वह ढाल है जिस से इन अचानक होने वाले हमलों से बचा जा सकता है। ऐसे लोग यह भी जानते हैं कि ख़ुदा की क़ुदरत के ज़रिए ही आफ़तों और बलाओं का मुक़ाबला किया जा सकता है। इसीलिए हर हाल में वह दुआ व मुनाजात करते हैं और कभी भी ख़ुदा या उसकी याद को नहीं भुलाते।

हज़रत अली[अ०] इमाम हसन[अ०] के नाम अपने ख़त में लिखते हैंः

> उसी से अपने दुख-दर्द का रोना रोते हो, मुसीबतों से निकालने की इल्तेजा करते हो और अपने कामों में मदद माँगते हो।[6]
>
> अल्लाह से डरो कि कहीं तुम अपनी शिकायतें उस शख़्स के सामने लेकर न बैठ जाओ जो तुम्हारी शिकायतों को दूर कर ही नहीं सकता।[7]

साथ ही हज़रत अली[अ०] इस बात को भी ख़ुदा की रहमत व मेहरबानी की निशानियों में से मानते हैं कि एक मोमिन बन्दा अपनी हाजतों और ज़रूरतों को ख़ुदा के सामने रखे और अपनी मुश्किलों का हल सिर्फ़ उसी से चाहे, न कि हर एक के सामने ख़ुदा की शिकायत करता फिरे। उसे जो कुछ कहना है सिर्फ़ ख़ुदा से कहे, अगर कोई गिला-शिकवा है तो वह भी ख़ुदा के सामने बयान करे और उसी से अपनी परेशानियों को दूर करने की दुआ करे।

सुबह-शाम और रात-दिन दुआ से मोहब्बत करने वाला इंसान अपनी दिली थकावट और मायूसियों के पतझड़ को ख़ुदा की याद के ज़रिए बहार और ख़ुशहाली में बदल देता है। दुआ की ख़ुश्बू से अपनी रूह और अपने दिल की फ़िज़ा को गुल्शन बना देता है। जिसका असर यह होता है कि आफ़तों और बलाओं के हमलों के सामने उसके माथे पर बल तक नहीं आता, क्योंकि मुश्किलों को हल करने वाले ख़ुदा का साया हर वक़्त उसके सर पर होता है। जब भी उसके ऊपर आफ़तों और बलाओं का हमला होता है तो वह दुआओं की ढाल से ख़ुद को बचा लेता है।

1- नहजुल बलाग़ा, ख़त/31
2- नहजुल बलाग़ा, ख़त/31
ولم يجعل بينک وبينہ من يحجبہ عنک لم يلجئک---
3- माहे रजब की दुआओं में लिखा है:
ऐ वह ख़ुदा जो माँगने वाले को भी देता है और उसे भी देता है जो नहीं मांगता और बे मारेफ़त है।
4- नहजुल बलाग़ा, हिकमत/146
وادفعوا امواج البلاء بالدعاء
5- नहजुल बलाग़ा, हिकमत/302
ما المبتلى الذى قد اشتد بہ البلاء بأحوج ---
देखिए: सूरए मुल्क, आयत/16-17 व 20
6- नहजुल बलाग़ा, ख़त/31
وشكوت اليہ همومک واستكشفتہ كروبک واستعنتہ على---
7- नहजुल बलाग़ा, ख़ुतबा/103
فالله الله ان تشكوا الى من لا يشكى شجوكم
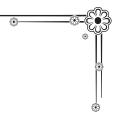
दुआ और क़ुबूलियत

ख़ुदा ने वादा किया है कि मुझे पुकारो और मुझ से दुआ करो, मैं तुम्हारी दुआओं को क़ुबूल करूँगा।

लेकिन इसके यह मायनी नहीं हैं कि जो भी तमन्ना या ख़्वाहिश हमारे दिल में आ जाए या जो भी ज़रूरत हो उसे अगर दुआ के नाम पर हम ख़ुद से मांग लें तो ज़रूर पूरी हो जाएगी। कभी-कभी ख़ुदा का करम, दुआ करने वाले की दुआओं के मुक़ाबले में हमारे लिए इतना ज़्यादा और ऐसा होता है कि हम उसे समझ ही नहीं सकते। कभी-कभी ऐसा भी होता है कि बन्दा जो दुआ मांग रहा है वह दुआ अगर पूरी कर दी जाए तो यह ख़ुद उसके नुक़सान में चली जाएगी। कभी-कभी दुआ के बारे में जो वक़्त हम सोचते हैं वह उसके बाद पूरी होती है। कभी हमारी दुआ पूरी भी हो जाती है और ख़ुदा हमारी चाहत और ख़्वाहिश से कहीं ज़्यादा हमें दे देता है, कभी दुआ इस तरह क़ुबूल होती है कि उसके बदले में कोई मुसीबत या बला दूर हो जाती है और कभी ऐसा होता है कि बहुत सी वजहों से दुआ क़ुबूल ही नहीं होती जिनके बारे में हम आगे चलकर बात करेंगे।

लेकिन ख़ुदा की तरफ़ से ख़ुद दुआ की तौफ़ीक़ का मिलना ही एक तरह से बन्दों की ख़्वाहिशों और दुआओं का जवाब है। दूसरे लफ़ज़ों में बन्दे का दुआ करना ख़ुदा के बुलाने पर लब्बैक कहना है। उसने अपने करम की वजह से तरह-तरह से हम से यह चाहा है कि हम उसकी बारगाह में हाज़िर हों। दुआ की तौफ़ीक़ का मतलब यह है कि हमारी

तरफ़ उसकी मेहरबानी भरी निगाह उठी हुई है।

हज़रत अली[अ०] कहते हैं:

> अल्लाह का हुक्म मानने वाले और उसके फ़रमाँबरदार बनो। उसकी याद से जी लगाओ। ज़रा इस हालत के बारे में सोचो कि वह तुम्हारी तरफ़ बढ़ रहा है और तुम उस से मुँह फेरे हुए हो। वह तुम्हें माफ़ करने के लिए अपनी तरफ़ बुला रहा है और तुम्हें अपने एहसान से ढाँपना चाहता है मगर तुम हो कि उस से भाग रहे हो।[1]

क्या यह सब दुआ के क़ुबूल होने की निशानियाँ नहीं हैं ?

हज़रत अली[अ०] ने एक दूसरी जगह पर कहा है:

> जिस किसी को चार चीज़ें मिल गईं, वह दूसरी चार चीज़ों से महरूम नहीं होता:
>
> जो दुआ करे वह क़ुबूलियत से महरूम नहीं होता।
>
> जिसे तौबा की तौफ़ीक़ हो जाए वह मक़बूलियत से नाउम्मीद नहीं होता।
>
> जिसे इस्तेग़फ़ार नसीब हो जाए वह मग़फ़िरत से महरूम नहीं होता।
>
> जो शुक्र करे वह इज़ाफ़े से महरूम नहीं होता।[2]

एक और जगह इमाम ने कहा:

> ऐसा नहीं कि अल्लाह किसी बन्दे के लिए शुक्र का दरवाज़ा खोले और नेमतों के बढ़ने का दरवाज़ा बन्द कर दे। किसी बन्दे के लिए दुआ का दरवाज़ा खोले और क़ुबूलियत के दरवाज़े को उसके लिए बन्द रखे।[3]

इसका मतलब यह है कि दुआ और उसके क़ुबूल होने

और शुक्र व नेमतों के बढ़ने के बीच बहुत क़रीबी रिश्ता है। यह ख़ुदा का पक्का वादा है कि जिसको हज़रत अली[अ०] भी बता रहे हैं। ख़ुदा का यह वादा उसके उन उसूलों में से है जो कभी नहीं टूटते।

लेकिन अगर कभी दुआ ख़ुदा की बारगाह तक नहीं पहुँचती या क़ुबूल नहीं होती तो उसकी वजह यह भी हो सकती है कि या तो जो दुआ की जा रही है उसकी कोई शर्त पूरी नहीं है या उस दुआ का पूरा होना बन्दे के नुक़सान में है या उस दुआ के क़ुबूल होने का अभी वक़्त नहीं आया है या दूसरी और कोई वजह भी हो सकती है जिसको हम नहीं जानते।

दुआ कोई भी हो उसके पूरा होने के लिए कुछ शर्तों का होना ज़रूरी है और जब तक वह शर्तें पूरी नहीं होंगी तब तक दुआ भी पूरी नहीं होगी। अगले चेप्टर में हम इसी बारे में बात करेंगे।

1- नहजुल बलाग़ा, ख़ुतबा/220
وكن لله مطيعا وبذكره آنسا
2- नहजुल बलाग़ा, हिकमत/135
من اعطى الدعاءلم يحرم الاجابة
3- नहजुल बलाग़ा, हिकमत/435
وما كان الله ليفتح على عبد باب الشكر و---

दुआ के आदाब और शर्तें

दूसरे दीनी अहकाम और इबादतों की तरह दुआ के भी कुछ आदाब और शर्तें हैं। जब तक दुआ के इन आदाब और इन शर्तों का ध्यान नहीं रखा जाएगा तब तक दुआ के पूरा होने की कोई गारंटी नहीं है।

अगर कोई दुआ मांगने वाला इन आदाब और शर्तों का ध्यान रखकर दुआ मांगे तो इससे यह भी साबित होता है कि वह अपनी हैसियत को भी जानता है और उसके मुक़ाम व दर्जे को भी पहचानता है जिसके सामने हाथ फैलाए खड़ा है।

आईए! अब दुआ के कुछ ज़रूरी आदाब की तरफ़ नज़र डालते हैं:

(1) ख़ुलूस

यह दुआ की शर्तों में से बहुत ख़ास शर्त है जिसका मतलब है सिर्फ़ और सिर्फ़ ख़ुदा को पुकारना और उस से दुआ करना, सिर्फ़ उस से उम्मीद लगाना, रिया और दिखावे से बचना, दिल की गहराई से दुआ करना, दुआ के पूरा होने या न होने को सिर्फ़ ख़ुदा से जोड़ना, बस उसी से लौ लगाना।

हज़रत अली[अ०] ने कहा है:

> अपने परवरदिगार से सवाल करो क्योंकि देना और न देना बस उसी की क़ुदरत में है।[1]

कुछ लोग ख़ुदा से सवाल तो करते हैं मगर उनकी

उम्मीदें किसी और जगह, किसी और हस्ती या किसी और चीज़ पर लगी होती हैं। हर चीज़ को ख़ुदा ही ने पैदा किया है और हर चीज़ उसी के हाथ में है। इसलिए दुआ में इन्सान की कैफ़ियत व हालत ऐसी होनी चाहिए कि दिल हर तरफ़ से कटकर सिर्फ़ और सिर्फ़ अपने पालने वाले की तरफ़ लगा हो। दूसरे लफ़ज़ों में उसकी हालत एक कश्ती में बैठे हुए उन लोगों की तरह होना चाहिए जिनकी कश्ती तूफ़ानी मौजों के थपेड़ों पर आ गई हो और कोई उनकी मदद करने वाला न हो। अगर उन्हें बचाने वाला कोई हो तो सिर्फ़ और सिर्फ़ ख़ुदा। ऐसी हालत हो तो यह है दुआ की असली हालत। क़ुरआने करीम ने इस तरह की दुआ को ''ख़ालिस दुआ'' कहा है लेकिन साथ में यह भी शिकायत की है कि जब वह किनारे पर सही सलामत पहुँच जाते हैं तो फिर इसी बचाने वाले ख़ुदा को भूल जाते हैं और शिर्क करने लगते हैं।[2]

अगर कोई इंसान एक अच्छी और राहत भरी ज़िन्दगी बसर कर रहा हो तब भी उसे एक परेशान हाल इंसान की तरह दिल की गहराई से ख़ुलूस के साथ दुआ करना चाहिए क्योंकि हो सकता है कि वह भी किसी वक़्त किसी मुसीबत या परेशानी में घिर जाए।

(2) ख़ुदा की तारीफ़

दुआ की दूसरी शर्त यह है कि दुआ की शुरूआत ख़ुदा की तारीफ़, उसकी हम्द और मोहम्मद व आले मोहम्मद[स०] पर सलवात से की जाए। दुआ के शुरू में ख़ुदा की नेमतों का ज़िक्र करना, ख़ुदा की तारीफ़ करना और रसूल पर दुरूद भेजना अपनी दुआ के क़ुबूल कराने का बेहतरीन ज़रिया है। ख़ुदा और फ़रिश्ते भी हमारे रसूल पर दुरूद भेजते हैं। ख़ुदा ने ईमान वालों को भी हुक्म दिया है कि वह भी रसूल पर दुरूद व सलाम भेजें।[3]

रसूल पर दुरूद भेजना एक ऐसी दुआ है जो अपने आप

क़ुबूल हो जाती है, क्योंकि ख़ुदा भी अपने रसूल पर दुरूद भेजता है इस लिए इस दुआ के साथ हमारी दुआ भी क़ुबूल हो जाती है।

हज़रत अली[अ०] फ़रमाते हैंः

> जब अल्लाह तआला से कोई चीज़ मांगों तो पहले उसके रसूल[स०] पर दुरूद भेजो। फिर अपनी हाजत माँगो क्योंकि ख़ुदा इस से बुलन्द है कि उस से दो हाजतें मांगी जाएं मगर वह एक को तो पूरा कर दे और एक को रोक ले।[4]

इस तरह कहा जा सकता है कि ख़ुदा से रिश्ता जोड़ने की शर्त सबसे पहले उसकी हम्द यानी उसकी तारीफ़ और फिर मोहम्मद व आले मोहम्मद[अ०] पर दुरूद भेजना है। अगर अहलेबैत[अ०] की मारेफ़त और उन से मोहब्बत हो तो आले मोहम्मद हमें सही रास्ता दिखाते हैं तब उस रास्ते पर चलकर हम ख़ुदा से रिश्ता जोड़ लेते हैं।

(3) अमल और कोशिश

दुआ के क़ुबूल होने की एक और शर्त अपनी मंज़िल तक पहुंचने के लिए कोशिश करना भी है। इन्सान को अपने मक़सद तक पहुँचने और आफ़तों व बलाओं या दुश्मनों से मुक़ाबला करने के लिए हर वक़्त कोशिश करने का हुक्म दिया गया है और इसके साथ-साथ दुआ भी करने का हुक्म दिया गया है। दुआ कभी भी कोशिशों की जगह नहीं ले सकती और न ही ख़ुदा का क़ानून यह है कि इन्सान अपने सारे कामों को दुआ व मुनाजात के ज़रिए हल करे। सिर्फ़ दुआ करने से इंसान को कामयाबी नहीं मिल सकती। अगर वह ख़ुद से कोशिश भी करेगा तो यह कोशिश उसकी दुआ के लिए मददगार ज़रूर हो जाएगी जैसे किसी बीमार के इलाज के लिए डॉक्टर के पास जाना, पैसा कमाने के लिए हाथ-पैर

मारना, पढ़ने के लिए स्कूल-कॉलेज जाना, दुश्मन को करारी शिकस्त देने के लिए जंग के मैदान में जाना वग़ैरा, इंसान जब इन में से कोई भी काम कर रहा हो तो उसे उस काम के साथ-साथ ख़ुदा से शिफ़ा, रिज़्क़, इल्म और जीत या कामयाबी की दुआ भी करना चाहिए।

हज़रत अली[अ०] कोशिश किए बिना दुआ करने को कमान के बिना तीर चलाने या निशाना लगाने जैसा बताते हैं जिसका कोई फ़ायदा नहीं हैः

> जो कुछ किए बिना दुआ माँगता है वह ऐसे ही है जैसे बिना कमान के तीर चलाने वाला।[5]

आमतौर पर कहा जाता है कि ''हरकत में बरकत है''। इसका मतलब भी यही है जो हज़रत अली[अ०] की ऊपर वाली हदीस कह रही है। जैसे अगर कोई किसी कम्प्टीशन की तैयारी कर रहा हो तो इस कम्प्टीशन की तैयारी के लिए वह जो कुछ कर सकता हो वह तो करना ही चाहिए मगर इसके साथ-साथ ख़ुदा से दुआ भी करना चाहिए। अगर वह बिना पढ़े-लिखे और मेहनत किये सिर्फ़ दुआ के सहारे यह चाहता है कि वह अपने कम्प्टीशन में कामयाब हो जाए तो उसकी यह ख़्वाहिश बेकार भी है और ग़लत भी। अगर वह सिर्फ़ अपने पढ़ने-लिखने और अपनी मेहनत पर ही भरोसा करके मग़रूर हो जाता है और यह मान लेता है कि कामयाबी उसका मुक़द्दर है तो यह भी सही नहीं है क्योंकि हो सकता है कि वह नाकाम हो जाए। दूसरे बहुत से फ़ैक्टर्स भी होते हैं जिन्हें हम नहीं जानते और जिनकी वजह से हमारी तौफ़ीक़ छिन जाती है या हम नाकाम हो जाते हैं।

(4) तक़वा

तक़वा भी दुआ के क़ुबूल होने के लिए एक बहुत बड़ा फ़ैक्टर है। एक गुनाहगार और बेपरवाह इंसान के मुक़ाबले में

उस इंसान की दुआओं के क़ुबूल होने की उम्मीद ज़्यादा होती है जो ख़ुदा से डरने वाला और अपनी ज़िम्मेदारियों को पूरा करने वाला है।

हज़रत अली[अ०] ने मोहम्मद बिन अबी बक्र को जो ख़त लिखा था उसमें परहेज़गारों और तक़वा वालों की कुछ सिफ़तें भी लिखी हैं:

> न उनकी कोई आवाज़ ठुकराई जाएगी, न उनके नसीब में कमी होगी।[6]

जिसने पूरी उम्र ख़ुदा की बातों को सुना हो और उसके हुक्म को माना हो, ऐसा आदमी जब ख़ुदा से कोई चीज़ मांगता है तो ख़ुदा भी उसकी ख़्वाहिश को रद्द नहीं करता। इसीलिए मुत्तक़ी और परहेज़गारों की दुआएं क़ुबूल होती हैं यानी दुआओं के क़ुबूल होने की एक शर्त, तक़वा भी है।

(5) जगह और वक़्त

जगह और वक़्त का भी दुआ के क़ुबूल होने में बहुत बड़ा हाथ होता है। यह देखना भी ज़रूरी है कि दुआ कहां, किस जगह और किस वक़्त की जा रही है। कुछ ख़ास जगहें और कुछ ख़ास वक़्त या दिन ऐसे होते हैं कि अगर उनमें दुआ की जाए तो दुआ के पूरा होने की उम्मीद ज़्यादा हो जाती है जैसे जुमे का दिन, शबे जुमा, शबे क़द्र, शबे मेराज, बारिश के वक़्त, अज़ान के वक़्त, इमाम हुसैन[अ०] का हरम, मैदाने अरफ़ात, काबे के पास वग़ैरा।

बेहतर यही है कि दुआ इन्हीं जगहों और इन्हीं वक़्तों में की जाए ताकि क़ुबूल होने की उम्मीद बढ़ जाए।

हज़रत अली[अ०] के एक ख़ास सहाबी थे नोफ़ बकाली। एक रात उन्होंने देखा कि हज़रत अली[अ०] ने अपना बिस्तर छोड़ा, आसमान के सितारों को देखा और ख़ुदा की इबादत व मुनाजात में लग गए। उसके बाद इंसान की ज़िन्दगी में दुआ

व मुनाजात की अहमियत को बयान करते हुए कहाः

> ऐ नोफ़! अल्लाह के नबी दाऊद[अ०] रात के इसी हिस्से में दुआ के लिए उठते थे। यह वही वक़्त है जिसमें अगर कोई बन्दा ख़ुदा को पुकारता है और उस से दुआ करता है तो उसकी दुआ क़ुबूल हो जाती है।।[7]

हज़रत अली[अ०] के मुताबिक़ सुबह के वक़्त और रात की तन्हाई में दुआ जल्दी क़ुबूल होती है, लेकिन इमाम ने कुछ लोगों को अलग कर दिया है जैसे वह लोग जिनसे दूसरे लोगों को अज़िय्यत व तकलीफ़ पहुँचती है और जो लोग ख़ुदा के दूसरे बन्दों पर ज़ुल्म करते हैं या गुनाहों और बुराईयों में डूबे हुए होते हैं।

ध्यान रहे कि जगह और वक़्त दुआ के क़ुबूल होने में मददगार ज़रूर हैं लेकिन ऐसा उसी वक़्त होता है जब दूसरा कोई फ़ैक्टर आड़े न आ रहा हो।

6- बार-बार दुआ मांगना

बार-बार दुआ मांगना भी दुआ की शर्तों में से एक शर्त है। ख़ुशी का वक़्त हो या ग़म का, मुश्किल हो या राहत, ग़ुरबत हो या अमीरी और सेहत हो या बीमारी, हर हाल में दुआ करते रहना चाहिए। हमेशा बन्दगी का एहसास और दुआ करना, हमेशा ख़ुदा को याद करना और उस से मदद चाहना भी दुआ के आदाब व शर्तों में से है।

हज़रत अली[अ०] इस बारे में कहते हैं कि उन लोगों में से मत हो जाओ जो अगर किसी मुसीबत में फंसते हैं तो गिड़गिड़ा-गिड़गिड़ा कर दुआ करते हैं और अगर आराम के साथ रह रहे होते हैं तो ग़ुरूर व तकब्बुर के साथ ख़ुदा से मुंह फेर लेते हैं।

7- ख़ुदा की मारेफ़त

दुआ की एक शर्त यह भी है, जिसपर पहले भी बात हो चुकी है कि ख़ुदा से अपनी दुआएं माँगने से पहले ख़ुदा की हम्द और तारीफ़ की जाए क्योंकि ऐसा करना ख़ुदा की अज़्मत व क़ुदरत और उसकी नेमतों के बारे में इन्सान की मारेफ़त व इल्म की निशानी है। ख़ुदा भी इन्सान की नियत और मारेफ़त को देखकर उसी के हिसाब से देता हैः

> क्योंकि जो कुछ दिया जाता है वह मांगने वाले की नियत के हिसाब से दिया जाता है।[8]

इमामों की ज़िंदगियों को अगर देखा जाए तो वहां हमें ऐसा ही देखने को मिलता है। वह दुआएं जो हम तक इमामों[अ०] से पहुँची हैं उन में हमें यही दिखता है कि हमारे इमामों[अ०] ने पहले ख़ुदा की हम्द व तारीफ़ की है, फिर ख़ुदा को उसके अस्माए हुस्ना और उसकी क़ुदरत व रहमत की क़सम दी है और उसके बाद उसकी सिफ़तों का तज़किरा किया है।

नहजुल बलाग़ा में हज़रत अली[अ०] की कुछ दुआओं में इस तरह लिखा हैः

> मैं अल्लाह से उसकी हर तरफ़ फैली हुई रहमत और हर हाजत को पूरा करने पर उसकी क़ुदरत का वास्ता देकर उस से सवाल करता हूँ कि वह मुझे और तुम्हें उस बात की तौफ़ीक़ बख़्शे जिसमें उसकी रज़ामन्दी व ख़ुशी शामिल है।[9]

इस तरह से दुआ की शुरूआत करना और दुआ का हाल पैदा करना दुआ और हाजतों के माँगने में बहुत असरदार होता है। इस से दुआ माँगने वाले के दिल में भी अपनी दुआ के क़ुबूल होने की उम्मीद और इत्मिनान पैदा हो जाता है।

8- टूटे हुए दिल, ख़ुज़ू व ख़ुशू और मज़लूमियत व पछतावे या शर्मिंदगी का भी दुआ के क़ुबूल होने और उसके

असर में बहुत गहरा रोल रहा है। इमाम अली[अ०] ने अपने सहाबी मालिके अश्तर के नाम जो ख़त लिखा है उसमें जहाँ उन्हें दूसरे लोगों पर ज़ुल्म करने से रोका है वहीं उनसे यह बात भी कही है कि ख़ुदा के बन्दों पर ज़ुल्म करने से इसलिए भी बचो क्योंकि ख़ुदा ही उनका सहारा है और वही उनकी मदद करता है। इस ज़ुल्म से ज़्यादा कोई चीज़ ऐसी नहीं है जो ख़ुदा की नेमतों के छिन जाने और ख़ुदा के अज़ाब में जल्दी की वजह बनती हो क्योंकि ख़ुदा कभी-कभी मज़लूमों की सिर्फ़ एक बद्दुआ या उनके दिल से निकली हुई सिर्फ़ एक आह, एक आंसू, एक टूटे हुए दिल से निकली हुई दुआ को फ़ौरन सुन लेता है।

इसलिए हमें चाहिए कि पहले हम दुआ के आदाब और उसकी शर्तों को समझें, इसके बाद दुआ करें और फिर दुआ के क़ुबूल होने की उम्मीद लगाएं।

ख़ुदा ने हमें बस एक दिल दिया है। इसलिए इस एक दिल में बस एक ख़ुदा को होना चाहिए, न कि सैकड़ों ख़ुदा। ख़ुलूस के साथ ख़ुदा को पुकारें और उस से दुआ करें, फिर अगर दुआ क़ुबूल न हो तब भी उसी से गिला-शिकवा करें।

1- नहजुल बलाग़ा, ख़त/31
و اخلص فی المسألۃ لربک فان بیدہ العطاء و الحرمان
2- सूरए अनकबूत/65
3- सूरए अहज़ाब/56
4- नहजुल बलाग़ा, हिकमत/361
اذا کانت لک الی اللہ سبحانہ حاجۃ فابدا بمسألۃ ---
5- नहजुल बलाग़ा, हिकमत/337
الداعی بلا عمل کالرامی بلا وتر
6- नहजुल बलाग़ा, ख़त/27
لا ترد لھم دعوۃ و لا ینقص لھم نصیب من لذۃ
7- नहजुल बलाग़ा, हिकमत/104
انھا ساعۃ لا یدعو فیھا عبد الا استجیب لہ
8- नहजुल बलाग़ा, ख़त/31
فان العطیۃ علی قدر النیۃ
9- नहजुल बलाग़ा, ख़त/53
و انا اسأل اللہ بسعۃ رحمتہ و عظیم قدرتہ ---
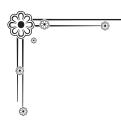
देर से दुआ के क़ुबूल होने की वजहें

कभी दुआ या तो पूरी ही नहीं होती या देर से होती है।

दुआ के सिरे से क़ुबूल न होने या देर से क़ुबूल होने की सारी वजहों को तो हम नहीं समझ सकते। उधर ख़ुदा की मस्लेहत व हिकमत पर भी हमारा एतेक़ाद है लेकिन ध्यान रहे कि हमारी दुआ के क़ुबूल होने या क़ुबूल न होने में हमारी अपनी ज़िंदगी, हमारे काम और हमारी सोच भी अपना गहरा असर रखती है। कुछ गुनाह, दुआ को ढक लेते हैं और क़ुबूल होने से रोक देते हैं। जैसा कि हज़रत अली[अ०] ने दुआए कुमैल में कहा है:

> ऐ ख़ुदा! मेरे उन गुनाहों को बख़्श दे जो दुआओं को जकड़ लेते हैं।

कभी दुआ पूरी तो हो जाती है लेकिन देरी से। कभी इसलिए भी पूरी नहीं होती कि ख़ुद दुआ करने वाले के अंदर, या उसके समाज में, उसके ख़ानदान में, उसके खान-पान में या उसके दोस्तों वग़ैरा में ऐसी कमियां होती हैं जिनकी वजह से दुआ क़ुबूल ही नहीं हो पाती।

अगर दुआ करते वक़्त हम ख़ुदा से अपना रिश्ता न जोड़ सकें तो हमें देखना चाहिए कि कौन सा गुनाह और कौन सी ग़लती ऐसी है जिसकी वजह से हम ख़ुद को ख़ुदा से नहीं जोड़ पा रहे हैं। कभी-कभी दिल का कठोर होना, हराम ग़िज़ाएं, ग़लत साथी और हमारे आसपास के बुरे लोग भी हमारे और ख़ुदा के रिश्ते को तोड़ देते हैं और हम ख़ुदा से नहीं जुड़ पाते जिससे दुआ के क़ुबूल होने में रुकावट पैदा हो

जाती है।

हज़रत अली[अ०] का मानना है कि दुआ ज़रूर पूरी होती है क्योंकि ख़ुदा का वादा कभी टूटने वाला नहीं है। हज़रत अली[अ०] देरी से दुआ के क़ुबूल होने की वजह और फ़ैक्टर्स को यूँ बयान करते हैं:

> हाँ! अगर कभी दुआ के क़ुबूल होने में देर हो तो उस से नाउम्मीद न हो जाना क्योंकि नेमत नियत के हिसाब से दी जाती है। अकसर क़ुबूलियत में इसलिए देर की जाती है कि मांगने वाले का अज्र और बढ़ जाए, उम्मीद लगाने वाने को नेमतें और ज़्यादा मिलें। कभी-कभी यह भी होता है कि तुम एक चीज़ माँगते हो और वह तुम्हें नहीं मिलती मगर दुनिया या आख़िरत में उस से बेहतर चीज़ तुम्हें मिल जाती है या तुम्हारे किसी बेहतर फ़ाएदे की वजह से तुम्हें वह चीज़ नहीं दी जाती क्योंकि तुम कभी ऐसी चीज़ें भी मांग लेते हो कि अगर तुम्हें दे दी जाएं तो तुम्हारा दीन तबाह हो जाए।[1]

ख़ुदा कितना मेहरबान है कि बन्दे की भलाई और फ़ाएदे ख़ुद बन्दे से ज़्यादा जानता और चाहता है।

कभी ख़ुदा को बन्दे की दुआ, उसकी फ़रियाद और आँसू भी पसन्द आ जाते हैं। इसलिए भी उसकी दुआ देरी से क़ुबूल करता है कि बन्दे की इस महबूब और दिल नशीं आवाज़ को ज़्यादा से ज़्यादा सुने और बन्दा इस मुक़द्दस और रूहानी इबादत में देर तक लगा रहे। यह चीज़ ख़ुद बन्दे के लिए फ़ाएदेमंद है जिससे बन्दा ख़ुदा से और क़रीब हो जाता है।

यह भी ध्यान रहे कि न हर दुआ और हर हाजत का पूरा होना, उसके करम व एहसान की दलील है और न किसी दुआ का पूरा न होना या देरी से पूरा होना हम से ख़ुदा की नाराज़गी का सुबूत है। ख़ास बात यह है कि बन्दा अपनी

बन्दगी के रास्ते पर चलता रहे और अपनी हाजतों और ज़रूरतों को सिर्फ़ अपने पालने वाले से मांगता रहे, चाहे उसकी दुआ पूरी हो या पूरी न हो।

हमारा काम दुआ करना है, बाक़ी ख़ुदा जाने जो बन्दों की भलाई चाहने वाला और उनका सब से बड़ा हमदर्द है।

कभी एक इन्सान कोई चीज़ मांगता है और वह उसे नहीं मिलती... लेकिन कुछ दिनों के बाद ख़ुद ही समझ जाता है कि दुआ का क़ुबूल न होना ही बेहतर था और अगर उस वक़्त दुआ पूरी हो जाती तो कितना बड़ा नुक़सान हो जाता। ख़ुदा के सिवा कौन है जो ग़ैब के पीछे की बातों को जानता हो? इस बात की क्या गारंटी है कि दुआ के फ़ौरन क़ुबूल हो जाने से बन्दा अपने ख़ुदा से बेपरवा नहीं हो जाएगा क्योंकि इस बात की बहुत उम्मीद है कि दुआ के पूरा हो जाने के बाद वह उसी में डूब कर रह जाए और ख़ुदा को सिरे से भूल ही जाए।

हज़रत अली[अ०] के हिसाब से दुआ के क़ुबूल न होने की एक और वजह लोगों के बीच अम्र बिल मारूफ़ और नही अनिल मुन्कर यानी अच्छाईयों की तरफ़ बुलाना और बुराईयों से रोकना जैसे अहम फ़र्ज़ को छोड़ देना है। इस दुनिया से जाते वक़्त अपने बेटों को जो वसिय्यत की थी उसमें हज़रत अली[अ०] कहते हैं:

> नेकी का हुक्म देने और बुराई से रोकने से कभी पीछे न हटना वरना बुरे लोग तुम पर हावी हो जाएंगे। फिर दुआ माँगोगे तो क़ुबूल नहीं होगी।[2]

इस रिश्ते को दोबारा से बनाने के लिए तौबा और नेक अमल के साथ-साथ यह वादा भी करना पड़ेगा कि हम ख़ुदा के हिल्म व सब्र और उसके सत्तार होने (यानी हमारे ऐबों को छुपाने वाला) का कभी ग़लत इस्तेमाल नहीं करेंगे वरना हमेशा इस रिश्ते के टूटने का ख़तरा बना रहेगा और यह ख़तरा भी हमारी तरफ़ से होगा, न कि मेहरबान ख़ुदा की तरफ़ से।

1- नहजुल बलाग़ा, ख़त/31
2- नहजुल बलाग़ा, ख़त/47
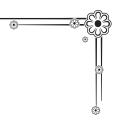
क्या माँगें?

यह तो हम जान ही चुके हैं कि दुआ और मुनाजात का एक हिस्सा ख़ुदा की हम्द और उसकी तारीफ़ भी है।

हर इंसान अपनी सोच और मारेफ़त के हिसाब से ख़ुदा से दुआ मांगता है। कुछ दुआएं व हाजतें आम, मामूली और सिर्फ़ इसी दुनिया से जुड़ी होती हैं। जबकि कुछ हाजतें बुलन्द, रूहानी और सोसाइटी के सभी लोगों से जुड़ी होती हैं।

हमें अगर ख़ुद ही मांगना हो तो शायद हम ख़ुदा से बहुत ही मामूली सी चीज़ें मांगेंगे लेकिन कैसे दुआ करें और ख़ुदा से क्या माँगें, इसके लिए ख़ुदा के भेजे हुए नबियों और इमामों[अ०] ने हमें काफ़ी कुछ बताया और सिखाया है। अगर हम इन हस्तियों के सिखाए रास्ते पर चलें तो हमारी दुआओं और हाजतों के मांगने की सतह यक़ीनन ऊंची हो जाएगी क्योंकि यह मासूमीन दुआओं में भी हमारे लिए आइडियल हैं।

जो दुआएं मासूमीन[अ०] से हम तक पहुँची हैं वह बहुत ही क़ीमती और गहरी बातें हमें सिखाती हैं। यह दुआएं हमें बताती हैं कि हम ख़ुदा से कैसे दुआ करें, उस से कैसे बात करें और क्या हाजतें तलब करें। यह दुआएं हम को यह भी सिखाती हैं कि हम अपने ख़ुदा से क्या मांगे। यह दुआएं हमें दीन की बुलन्द वेल्यूज़ की पहचान कराती हैं, हमारी सोच को बड़ा बनाती हैं और हमारे ख़यालात को गहराई तक ले जाती हैं जिसके बाद हमारी ज़बान पर बेहतरीन हाजतों व दुआओं के अलावा कुछ और आता ही नहीं।

कितना अच्छा होता कि इन्सान दुआ करना और हाजतों का मांगना भी मासूमीन[अ०] से सीखता कि जिनकी निगाहें इन्सान की हक़ीक़ी कामयाबी और सिर्फ़ इस दुनिया पर ही नहीं बल्कि आख़िरत पर भी होती हैं।

इमाम अली[अ०] ने अपने बेटों के नाम वसिय्यत में कहा हैः

> इसलिए तुम्हें बस वह चीज़ मांगना चाहिए जिसकी अच्छाई टिकाऊ हो और जिसकी मुसीबत तुम्हारे सर न पड़ने वाली हो। रहा दुनिया का माल तो न यह तुम्हारे लिए रहेगा और न तुम इसके लिए रहोगे।[1]

यानी जो चीज़ें ख़ुदा से माँगो वह दुनिया की चीज़ों और यहां के माल व दौलत से कहीं ज़्यादा बुलन्द हों। तुम्हारे मरने के बाद तुम्हारी दूसरी ज़िंदगी शुरू हो जाएगी, इसलिए ऐसी चीज़ें माँगो जो मरने के बाद की ज़िन्दगी में भी तुम्हारे काम आ सकें। ऐसी चीज़ें मत मांगो जो इन्सान के साथ वफ़ा नहीं करतीं क्योंकि वह तो ख़ुद ही ख़त्म हो जाने वाली हैं और जो चीज़ एक दिन ख़त्म हो जाने वाली हो उससे क्या मोहब्बत करना!

इमाम अली[अ०] ने अपनी इसी वसिय्यत में अपने बेटे इमाम हसन[अ०] से कहा हैः

> तुम उसी से मुरादें माँगते हो और उसकी रहमत के ख़ज़ानों से वह चीज़ें मांगते हो जिन्हें देने की किसी दूसरे में क़ुदरत नहीं है जैसे लम्बी उम्र, जिस्मानी सेहत, ताक़त और रिज़्क़ में ज़्यादती।[2]

यह इस बात का सुबूत है कि अगर लम्बी उम्र सही रास्ते पर लगाई जाए तो सेहत, तन्दुरुस्ती और दौलत भी अच्छी चीज़ें हैं जिनको ख़ुदा से मांगा जा सकता है। साथ ही यह सब ऐसी ज़रूरतें हैं जिनका पूरा करना सिर्फ़ और सिर्फ़ ख़ुदा के हाथ में है और उसके अलावा कोई और नहीं है जो हमें लम्बी

उम्र, सेहत व तन्दुरुस्ती और राहत भरी ज़िंदगी दे सके।

इसी वसिय्यत में हज़रत अली[अ०] कहते हैं:

اکثر الاستخارہ

यानी ख़ुदा से ज़्यादा से ज़्यादा ख़ैर और अच्छाई मांगो।

हमारी सोसाइटी में भी एक इस्तेख़ारा बहुत मशहूर है जिसे हम सब जानते हैं लेकिन इसके अलावा भी इस्तेख़ारे के एक और हक़ीक़ी मायनी हैं और वही असली मायनी हैं यानी ख़ुदा से "ख़ैर और अच्छाई मांगना"।

कितना अच्छा होता कि इन्सान ग़ौर करने, सोच-विचार करने और राय-मश्वरा करने के अलावा हमेशा इस्तेख़ारे से काम लेता यानी ख़ुदा से दुआ करता कि जो उसके हक़ में बेहतर है वही उसके सामने आए, वही उसके ज़ेहन में आए और वही मश्वरा देने वाले की ज़बान पर भी आए जिससे हमेशा ख़ैर और अच्छाई ही उसका मुक़द्दर बने।

इस तरह अगर देखा जाए तो इस्तेख़ारा दुआ की ही एक क़िस्म है। हज़रत अली[अ०] ने ऐसी दुआ पर बहुत ज़ोर दिया है।

सारी नेमतें बस दुनियावी ही नहीं हैं और सारी ख़्वाहिशें बस दुनिया ही में ख़त्म नहीं हो जाती हैं। हमें चाहिए कि अपनी सोच और ख़यालात को बुलन्द करते हुए हज़रत अली[अ०] की दुआओं से बुलंद ख़्वाहिशों और बुलंद सोच को अपनाना सीखें। और फिर यही दुआएं ख़ुदा से मांगें। इमामों से जो दुआएं हम तक पहुंची हैं उन्हें पढ़ने पर इसी लिए इतना ज़ोर दिया गया है।

हज़रत अली[अ०] एक दुआ में कहते हैं:

> हम अल्लाह से सवाल करते हैं कि वह हमें और तुम्हें ऐसा कर दे कि यह नेमतें हमें भटका न सकें। इनकी वजह से हम किसी भी मंज़िल पर ख़ुदा की इताअत से आजिज़ न हों और मरने के बाद न शर्मिंदगी उठाना पड़े और न रंजो ग़म

सहना पड़े।[3]

यह हैं वह ख़ास हाजतें और दीनी ख़्वाहिशें...कुछ लोग ऐसे भी होते हैं जो अपनी माली व दुनियावी हालत बेहतर होते ही रास्ते से बहक जाते हैं। ज़रा-ज़रा सी चीज़ों की वजह से ख़ुदा को भुला बैठते हैं और आख़िरत में शर्मिन्दगी व हसरत उनका मुक़द्दर बनती है।

हज़रत अली[अ०] इलाही आज़माइश (इम्तेहान) और उस से बचने की दुआ करने के बारे में कहते हैंः

> तुम में से कोई यह न कह बैठे कि 'ऐ अल्लाह मैं तुझ से इम्तेहान व आज़माइश से पनाह चाहता हूँ' क्योंकि कोई भी आदमी ऐसा नहीं होगा जो इम्तेहान व आज़माइश की लपेट में न हो। अगर किसी को पनाह माँगना है तो उसे गुमराह करने वाले इम्तेहानों व आज़माइशों से पनाह माँगना चाहिए।[4]

यानी ख़ुदा अगर हमारा इम्तेहान ले तो इंसान को चाहिए कि उस इम्तेहान में कामयाबी की दुआ करे, न यह कि यह दुआ करने बैठ जाए कि सिरे से ख़ुदा इम्तेहान ही न ले क्योंकि बन्दों का इम्तेहान ख़ुदा का एक ऐसा क़ानून है जिसमें किसी इंसान के बचने की कोई गुंजाइश नहीं है।

ख़ुदा हमारा जो इम्तेहान लेता है उसमें कामयाबी की दुआ करना बहुत अहम दुआ है क्योंकि इंसान अगर तर्जुबे और इम्तेहान की कसौटी पर खरा उतर जाए तो यह उसकी ख़ुश क़िस्मती और मुक़द्दर है। अगर इस इम्तेहान में ज़रा सी भी खोट और मिलावट है तो उसको नाकामी और रुस्वाई का सामना करना पड़ेगा।

अपने एतेक़ाद और दीन की सलामती उन ख़ास दुआओं में से है जिसके लिए ख़ुदा से हमेशा दुआ करना चाहिए। अगर हमारी माली हालत मज़बूत और अच्छी हो, अगर हमारा बदन ठीक-ठाक और सेहतमंद हो मगर हम एतेक़ादी

और दीनी एतेबार से कमज़ोर हैं तो फिर सच्चाई यह है कि हम नाकाम हैं क्योंकि हमारे अक़ीदे और हमारे दीन का तमाम आफ़तों व बलाओं से महफ़ूज़ होना हमारी तन्दुरुस्ती और दौलत से कहीं ज़्यादा अहम है।

यही वजह है कि हज़रत अली[अ०] यूँ दुआ करते हैं:

> जिस तरह हम उस से जिस्मों की सेहत का सवाल करते हैं उसी तरह दीन व ईमान की सलामती भी उसी से चाहते हैं।[5]

ख़ुदा से क्या माँगें और उस से क्या दुआ करें, इसके लिए भी हमें ख़ुदा से ही दुआ करना चाहिए कि ऐ ख़ुदा! जिसमें हमारे लिए ख़ैर है और अच्छाई व भलाई है वही दुआ हमारी ज़बान पर बेहतरीन दुआ की शक्ल में आए! तू ही हमारी हिदायत कर और हमें रास्ता दिखा! हमारी सोच और हमारे ख़यालात को बेहतरीन दुआओं और हाजतों की तरफ़ मोड़ दे!

हज़रत अली[अ०] की कुछ दुआओं में इस तरह लिखा है:

> ऐ ख़ुदा! अगर मैं सवाल करने से आजिज़ रहूँ या अपने मक़सद पर नज़र न डाल सकूँ तो तू मेरी मस्लेहतों की तरफ़ राहनुमाई कर और मेरे दिल को कामयाबी की सही मंज़िल पर पहुँचा।[6]

हज़रत अली[अ०] ने अपने कुछ ख़ुतबों को इस दुआ पर ख़त्म किया है जो बेहतरीन दुआओं और हाजतों का बहुत ख़ूबसूरत नमूना है:

> हम अल्लाह से शहीदों का दर्जा, नेक लोगों की दोस्ती और नबियों के साथ का सवाल करते हैं।[7]

सब जानते हैं कि शहीदों की जगह जन्नत है। नेक लोग भी पाकीज़ा ज़िन्दगी गुज़ारते हैं, नबियों की मोहब्बत और उनका साथ भी ख़ालिस नियत, नेक अमल और ख़ुदा की

बन्दगी के साथ ही हमें नसीब हो सकता है।

हज़रत अली[अ०] ने इन तीन चीज़ों के ज़रिए हमें एक बहुत क़ीमती और बहुत गहरी दुआ सिखाई है।

1- नहजुल बलाग़ा, ख़त/31
فلتکن مسالتک فیما یبقی لک جمالہ وینفی عنک ---
2- नहजुल बलाग़ा, ख़त/31
فافضیت الیہ بحاجتک وسالتہ من خزائن رحمتہ ما لا یقدر---
3- नहजुल बलाग़ा, ख़ुतबा/62
نسأل اللہ سبحانہ ان یجعلنا وایاکم ممن لا تبطرہ نعمۃ ---
4- नहजुल बलाग़ा, हिकमत/93
5- नहजुल बलाग़ा, ख़ुतबा/97
ونسألہ المعافاۃ فی الادیان کما نسألہ المعافاۃ فی الابدان
6- नहजुल बलाग़ा, ख़ुतबा/224
اللھم ان فھھت عن مسألتی أو عمیت عن طلبتی---
7- नहजुल बलाग़ा, ख़ुतबा/23
نسأل اللہ منازل الشھداء ومعایشۃ السعداء ومرافقۃ الانبیاء
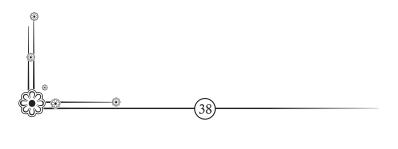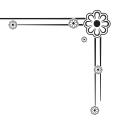
रौशनी फैलाने वाले

हर ज़माने में ऐसे लोग रहे हैं जो ख़ुदा की मारेफ़त, ख़ुदा के ज़िक्र, ख़ुदा की याद और दुआ व मुनाजात में ज़मीन पर ख़ुदा की हुज्जत समझे जाते थे जो ख़ुदा तक पहुँचने वाले इस नूरानी रास्ते को अच्छी तरह से पहचानते थे।

इमाम अली[अ०] जब सूरए नूर की आयत/37 को पढ़ते थे तो कहते थे कि यही वह लोग थे जिन्होंने ख़ुदा के ज़िक्र को अपने दिल का नूर और अपनी रूह का सुकून बना लिया था। फ़तरत के ज़माने में जब कि रसूल व रिसालत से ज़माना ख़ाली था तो ख़ुदा इन्हीं लोगों के दिलों के साथ राज़ो नियाज़ किया करता था और उनके चेहरों को हक़ व हक़ीक़त की तरफ़ मोड़ देता था।

हज़रत अली[अ०] अल्लाह के इन ख़ास बन्दों की सिफ़तें इस तरह गिनाते हैः

> यह अंधियारों के चिराग़ और दिलों में पैदा होने वाले शकों को दूर करने वाले होते हैं। कुछ अल्लाह वाले ऐसे भी हैं जिन्होंने ख़ुदा की याद को दुनिया के बदले में ले लिया है। उन्हें न काम काज इस से दूर कर पाता है न बेचना व ख़रीदना। यह लोग अल्लाह की याद के साथ ही ज़िन्दगी के दिन बसर करते हैं और बेख़बर सोए लोगों को उन कामों से रोकने की कोशिश करते हैं जो अल्लाह ने हराम किए हैं। अद्ल व इंसाफ़
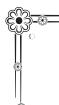
का हुक्म देते हैं और ख़ुद भी उस पर अमल करते हैं। बुराईयों से रोकते हैं और ख़ुद भी उन से दूर रहते हैं जैसे कि उन्होंने दुनिया में होते हुए ही आख़िरत की मंज़िल को तय कर लिया हो और जो कुछ दुनिया के बाद आने वाला है उसे अपनी आँखों से देख लिया हो जैसे कि वह एक लम्बे ज़माने तक बरज़ख़ में रहने वालों के उन छुपे हुए हालात को भी जान चुके हैं जो अभी उनके साथ घटे भी नहीं हैं, जैसे कि क़यामत ने उनके लिए अपने वादों को पूरा कर दिया हो।
जैसे कि वह अल्लाह को पुकारने की वजह से उसकी बख़्शिश की हवाओं में साँस लेते हों, उसके फ़ज़्ल व करम के असीर हों और उसकी बुज़ुर्गी व अज़मत के सामने ज़िल्लत व पस्ती में जकड़े हुए हों, ग़म व परेशानी के एक लम्बे वक़्त ने उनके दिलों को और आंसुओं की ज़्यादती ने उनकी आँखों को ज़ख़्मी कर दिया हो। हर उस दरवाज़े पर उनका हाथ दस्तक देने वाला है जो उन्हें ख़ुदा की तरफ़ ले जाए।
वह उस से माँगते हैं जिसका करम कभी कम ही नहीं होता और न अपनी ख़्वाहिशें लेकर बढ़ने वाले नाउम्मीद फिरते हैं।[1]

यह ख़ुदा वालों और ख़ुदा से दुआ व मुनाजात करने वालों की निशानियों के कुछ नमूने थे जिन पर ख़ुदा का ख़ास करम था। यहाँ तक कि फ़तरत के ज़माने में भी जबकि नबियों का सिलसिला रूका हुआ था, यह लोग बन्दगी और दुआ व मुनाजात की लज़्ज़त को पहचानते थे और लोगों के बीच रास्ता दिखाने वाले समझे जाते थे। यह लोग इतने समझदार, अक़्लमंद और बसीरत वाले थे कि रास्ता चलने वाले भी थे और रास्ता दिखाने वाले भी।

1- नहजुल बलाग़ा, ख़ुतबा/219
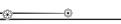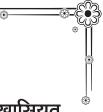
रसूले इस्लाम[स०] के सहाबियों की ख़ासियत

रसूले इस्लाम[स०] के उन सहाबियों और उस वक़्त के उन नेक मुसलमानों को याद करना हमेशा दुनिया भर के मुसलमानों को सच्चा और पक्का मुसलमान बनने पर उकसाता रहेगा जो हर वक़्त रसूल[स०] के साथ रहते थे और जिन्होंने अपने वक़्त में बड़े-बड़े काम किये थे।

इमाम अली[अ०] अपने सहाबियों और साथियों से बड़े परेशान रहते थे क्योंकि उनके साथी बहुत सुस्त और नाकारा हो गए थे। अपने एक ख़ुतबे में अपने इन साथियों को बुरा-भला कहते हुए हज़रत अली[अ०] ने बड़ी हसरत के साथ उन मुसलमानों को याद किया है जो रसूल[स०] के साथ-साथ थे। क़ुरआन पढ़ना उनका सबसे पसंदीदा काम होता था, जंग के मैदान में आगे-आगे होते थे और अपने दिलों में शहादत का जज़्बा लिए नंगी तलवारें लेकर मैदाने जंग की तरफ़ निकल पड़ते थे।

हज़रत अली[अ०] उनके रूहानी हालात, उनकी दुआ व मुनाजात और ख़ुदा से राज़ो नियाज़ को इस तरह बयान करते हैं:

> रोने से उनकी आँखें सफ़ेद, रोज़ों से उनके पेट चिपके हुए, दुआओं से उनके होंट ख़ुश्क और जागने से उनके रंग पीले हो गए थे। आजिज़ी करने वालों की तरह उनके चेहरे मिट्टी में अटे रहते थे।[1]

यह ख़ासियतें और सिफ़तें यानी अल्लाह की मारेफ़त व

पहचान, बहादुरी, रात-रात भर रोना, आंसू, दुआएं, मुनाजात, जिहाद, जंगें... यह सब रसूल के सहाबियों की ख़ासियत थी जिनकी परवरिश ख़ुद रसूल ने की थी। यह वह लोग थे जिन्होंने ख़ुदा और उसकी बन्दगी के इश्क़ से अपनी रातों को दुआ व मुनाजात और आंसुओं से रौशन व नूरानी कर रखा था।

हज़रत अली[अ०] एक दूसरे ख़ुतबे में कहते हैं:

> मैंने मोहम्मद[स०] के ख़ास-ख़ास सहाबियों को देखा है । मुझे तो तुम में से एक भी ऐसा नहीं दिखता जो उनके जैसा हो। वह इस हालत में सुबह को उठते थे कि उनके बाल बिखरे हुए और चेहरे ख़ाक से अटे होते थे जबकि रात को वह सजदों व क़याम में काट चुके होते थे, इस हालत में कि कभी पेशानियाँ सजदे में रखते थे और कभी अपने गाल। मैदाने हश्र की याद से इस तरह बेचैन रहते थे जैसे अंगारों पर ठहरे हुए हों। जब भी उनके सामने अल्लाह का ज़िक्र आ जाता था तो उनकी आँखें बरस पड़ती थीं यहाँ तक कि उनके गिरेबानों को भिगो देती थीं।[2]

इसी वजह से हज़रत अली[अ०] चाहते थे कि उनके साथी भी रसूल के ज़माने के मुसलमानों की तरह ख़ुदा की बारगाह में दुआ व मुनाजात, आहो बुका और ख़ुदा को याद करके आंसू बहाने वाले हों।

1- नहजुल बलाग़ा, ख़ुतबा/119
مره العيون من البكاء خمص البطون من الصيام---
2- नहजुल बलाग़ा, ख़ुतबा/95
لقد رأيت اصحاب محمد

हज़रत अली[अ०] की दुआएं

नहजुल बलाग़ा में हज़रत अली[अ०] ने बहुत सी जगहों पर ख़ुदा से दुआएं भी मांगी हैं जिनके ज़रिए हमें ख़ुदा से दुआ मांगने का सलीक़ा और तरीक़ा भी सिखाया है जो हमारे लिए बेहतरीन मिसाल है, जिन्हें पढ़कर हम यह समझ सकते हैं कि हमें ख़ुदा से क्या माँगना है।

इनमें से कुछ दुआओं को हम पिछले पन्नों में ज़िक्र कर चुके हैं।

नहजुल बलाग़ा में हज़रत अली[अ०] ने अपनी दुआओं के बीच हमें बहुत गहरे मतलब और बातें सिखाई हैं। इन दुआओं में हम यह भी देखते हैं कि इमाम ने दुआ के साथ-साथ ख़ुदा की हम्द, उसकी तारीफ़ और उसकी सिफ़तें भी बताई हैं।

आईए! अब इन दुआओं के कुछ नमूने देखते हैं ताकि इन्हें पढ़कर हमारे अंदर भी हज़रत अली की सिखाई हुई दुआएं मांगने का सलीक़ा पैदा हो सके।

1-सफ़र पर निकलते वक़्त दुआ

ऐ अल्लाह! मैं सफ़र की परेशानी, वापसी की मुसीबत, अपने घर वालों और माल की बदहाली के मंज़र से पनाह माँगता हूँ। ऐ अल्लाह! तू ही

सफ़र में हमारा साथी और बाल-बच्चों का रखवाला है। चाहे सफ़र हो या घर, तेरे अलावा कोई हमें एक दूसरे के साथ नहीं रख सकता।[1]

2- वह दुआ जिसे इमाम अली[अ०] बहुत मांगा करते थे

ऐ अल्लाह! मैं तेरी पनाह चाहता हूँ कि तेरी दी हुई दौलत के बावजूद फ़क़ीर रहूँ या तेरी राहनुमाई के होते हुए भटक जाऊँ या तेरी हुकूमत में रहते हुए सताया जाऊँ या ज़लील किया जाऊँ जबकि सारी क़ुदरत और सारा इख़्तियार सिर्फ़ तेरे पास हैं। ऐ ख़ुदा! मेरी उन नफ़ीस चीज़ों में जिन्हें तू छीन लेगा, मेरी रूह को सबसे आगे का दर्जा अता कर और मुझे सौंपी हुई उन अमानतों में जिन्हें तू पलटा लेगा इसे पहली अमानत बना दे।

ऐ अल्लाह! हम तुझ से पनाह चाहते हैं इस बात से कि तेरी दी हुई हिदायत से मुँह मोड़ें या ऐसे फ़ितनों में पड़ जाएं कि तेरे दीन से ही फिर जाएं या तेरी तरफ़ से आई हुई हिदायत को क़ुबूल करने के बजाए हमारे दिल की ख़्वाहिशें हमें बुराई की तरफ़ ले जाएं।[2]

3- बारिश की दुआ

ऐ अल्लाह! तेरी रहमत की ख़्वाहिश करते हुए, नेमतों की भरमार चाहते हुए, तेरे अज़ाब व ग़ज़ब से डरते हुए हम पर्दों और घरों के कोनों से तेरी तरफ़ निकल खड़े हुए हैं। इस वक़्त जबकि जानवर चीख़ रहे हैं और बच्चे चिल्ला रहे हैं, ऐ ख़ुदा! हमें बारिश से सैराब कर दे। हमें मायूस न
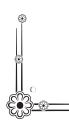
कर और सूखे से हमें हलाक न होने दे। हम में से कुछ बेवक़ूफ़ों के करतूतों पर हमें अपनी पकड़ में न ले।
ऐ रहम करने वालों में बहुत रहम करने वाले, ऐ ख़ुदा! जब हमें सख़्तियों व तंगियों ने बेचैन कर दिया, सूखे ने बेबस बना दिया और हद से बढ़ी हुई ज़रूरतों ने लाचार बना डाला और मुँहज़ोर फ़ितनों का हम पर ताँता बंध गया तो हम तेरी तरफ़ निकल पड़े हैं...।
ऐ अल्लाह! हम तुझ से सवाल करते हैं कि तू हमें महरूम न पलटा और न इस तरह वापस कर कि हम अपने ऊपर ही रो रहे हों। हमारे गुनाहों की वजह से हम से (अपने ग़ज़ब की हालत में) ख़िताब न कर और हमारे किये के मुताबिक़ हम से सुलूक न कर।
ऐ ख़ुदा! तू हम पर बारिश व बरकत और रिज़्क़ व रहमत का दामन फैला दे।[3]

4- जंगे सिफ़्फ़ीन के शुरू में दुआ

ऐ अल्लाह! ऐ इस बुलन्द आसमान और थमी हुई फ़िज़ा के परवरदिगार! अगर तूने हमें दुश्मनों पर छा जाने का मौक़ा दिया तो ज़ुल्म से हमारा दामन बचाना और हक़ के सीधे रास्ते पर बाक़ी रखना और अगर दुश्मनों को हम पर हावी कर दिया तो हमें शहादत नसीब करना और ज़िंदगी के फ़रेबों से बचाए रखना।[4]

5- एक और दुआ

ऐ अल्लाह! तू उन चीज़ों को बख़्श दे जिन्हें तू मुझ से ज़्यादा जानता है। अगर मैं गुनाह की

तरफ़ पलटूँ तो तू अपनी मग़फ़िरत के साथ पलट।
ऐ ख़ुदा! जिस नेक अमल के बजा लाने का मैंने अपने आप से वादा किया था मगर तूने उसे पूरा होते हुए नहीं पाया उसे भी बख़्श दे।
मेरे अल्लाह ज़बान से निकले हुए वह अलफ़ाज़ जिन से तेरे क़रीब आना चाहा था मगर दिल उन का साथ न दे सका उन्हें भी माफ़ कर दे। परवरदिगार! तू आँखों के (तंज़िया) इशारों, ग़लत अलफ़ाज़, दिल की (बुरी) ख़्वाहिशों और ज़बान की तेज़ियों को माफ़ कर दे।[5]

6- दुश्मनों के लिए दुआ

ऐ ख़ुदा! हमारा भी ख़ून महफ़ूज़ रख और उनका भी। हमारे और उनके बीच सीधे रास्ते पर चलने की सूरत पैदा कर और उन्हें गुमराही से हिदायत की तरफ़ ले आ।[6]

7- दुश्मनों के लिए बद्दुआ

ऐ ख़ुदा! अगर यह हक़ को ठुकरा दें तो इनके जत्थे को तोड़ दे और इन्हें एक आवाज़ पर जमा न होने दे और इनके गुनाहों की सज़ा में इन्हें बर्बाद कर दे। यह अपने मक़सद से हटने वाले नहीं हैं।[7]

8- इज़्ज़त-आबरू के लिए दुआ
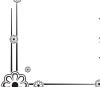
ऐ ख़ुदा! मेरी इज़्ज़त और आबरू को ग़िना व तवंगरी के साथ महफ़ूज़ रख। ग़ुरबत व परेशान हाली से मेरी मंज़िलत को नज़रों से न गिरा कि

कहीं ऐसा न हो कि तुझ से रोज़ी-रोटी माँगने वालों से ही अपनी रोज़ी माँगने लगूँ, तेरे बन्दों के ऐहसान व करम को अपनी तरफ़ मोड़ने की तमन्ना करूँ, जो कोई भी मुझे कुछ दे दे उसकी तारीफ़ करने लगूँ और जो न दे उस की बुराई में लग जाऊँ।[8]

9- अपनी तारीफ़ करने वालों के जवाब में दुआ

ऐ अल्लाह! तू मुझे मुझ से भी ज़्यादा जानता है और मैं इन लोगों से ज़्यादा अपने आप को पहचानता हूँ। ऐ ख़ुदा! हमारे बारे में जो यह लोग सोचते हैं हमें उस से बेहतर बना दे और उन (ग़ल्तियों) को बख़्श दे जिनके बारे में यह जानते ही नहीं हैं।[9]

10- निफ़ाक़ से बचने की दुआ

ऐ अल्लाह! मैं तुझ से पनाह माँगता हूँ इस बात से कि मेरा ज़ाहिर लोगों की उन निगाहों में बहतर हो जो सिर्फ़ ज़ाहिर को देख पाती हैं और जो अपने आप से छुपाए हुए हूँ वह तेरी नज़रों में बुरा हो। जबकि मैं लोगों के दिखावे के लिए अपने आपको उन चीज़ों से बचाऊँ जिन सब को तू जानता है। इस तरह मैं लोगों के सामने तो अपने ज़ाहिर के अच्छा होने की नुमाइश करूँ और तेरे सामने अपनी बुराईयों को रखता रहूँ जिसके नतीजे में तेरे बन्दों से तो क़रीब हो जाऊँ मगर तेरी मर्ज़ी व ख़ुशी से बहुत दूर होता चला जाऊँ।[10]

यह हमारे इमाम हज़रत अली[अ०] की दुआओं के वह नमूने

हैं जो दुआ और ख़ुदा से अपनी बुलन्द हाजतों की तलब में इमाम की बड़ी हिम्मत और बड़ी सोच का सुबूत हैं। अलवी दुआओं का बहुत बड़ा ज़ख़ीरा दुआओं की दूसरी किताबों में भी मौजूद है। इस किताब में हम ने सिर्फ़ नहजुल बलाग़ा में लिखी दुआओं के कुछ हिस्से पेश किये हैं। यह दुआएं नहजुल बलाग़ा के ख़ुतबों, ख़तों और हिकमतों के बीच-बीच में आई हैं, ऐसा नहीं है कि इमाम ने इन दुआओं को बाक़ाएदा दुआओं के तौर पर पेश किया हो।

अगर किसी को हज़रत अली[अ०] की ख़ास दुआओं को देखना हो तो उसे चाहिए कि दुआए कुमैल, दुआए सबाह और मस्जिदे कूफ़ा में आपकी मुनाजात को पढ़े ताकि रात के अंधेरों में उसे अली[अ०] की किसी हद तक पहचान हो सके जिसके बाद वह भी इसी रास्ते पर चलकर दुआ, राज़ो नियाज़ और मुनाजात के ज़रिए अपने पालने वाले तक पहुंच जाए ताकि ख़ुदा उसके दिल को भी नूरानियत अता कर दे।

1- नहजुल बलाग़ा, ख़ुतबा/46
اللھم انی اعوذبک من وعثاء السفر وکابۃ المنقلب۔۔۔
2- नहजुल बलाग़ा, ख़ुतबा/213
اللھم انی اعوذبک ان افتقر فی غناک
3- नहजुल बलाग़ा, ख़ुतबा/143
اللھم انا خرجنا الیک من تحت الاستار والاکنان
4- नहजुल बलाग़ा, ख़ुतबा/169
اللھم رب السقف المرفوع
5- नहजुल बलाग़ा, ख़ुतबा/76
اللھم اغفر لی ما انت اعلم بہ منی
6- नहजुल बलाग़ा, ख़ुतबा/204
7- नहजुल बलाग़ा, ख़ुतबा/122
اللھم فان ردو الحق فافضض جماعتھم
8- नहजुल बलाग़ा, ख़ुतबा/222
اللھم صن وجھی بالیسار
9- नहजुल बलाग़ा, हिकमत/100
اللھم انک اعلم بی من نفسی
10- नहजुल बलाग़ा, हिकमत/276